तुलसी वचनामृत

श्री स्वामी शुकदेवानन्द

❀ श्रीपरमात्मने नमः ❀

तुलसी बचनामृत

संग्रहकर्ता—

श्री १०८ श्री स्वामी शुकदेवानन्द जी महाराज

प्रकाशक—

मुमुक्षु आश्रम, शाहजहाँपुर

प्रथमवार ५००० } १९५४ ई० { मूल्य =)

❀ प्रार्थना ❀

हे ईश ! बहु उपकार तुमने सर्वदा हम पर किये ।
उपहार प्रति उपकार में क्या दूं तुम्हें इसके लिये ॥
है क्या हमारा सृष्टि में यह तुम्हीं से है बनी ।
संतत ऋणी हैं हम तुम्हारे तुम हमारे हो धनी ॥
लोक शिक्षा के लिये अवतार जिसने था लिया ।
निर्विकार निरीह होकर नर सदृश कौतुक किया ॥
श्रीराम नाम ललाम जिनका सर्व मंगल धाम है ।
प्रथम उस सर्वेश को श्रद्धा समेत प्रणाम है ॥

श्री तुलसीदास जी की रामायण कर्म भक्ति ज्ञान का भंडार है। और उसमें नीति भी कूट कूटकर भरी है, सम्पूर्ण रामायण के पढ़े विना उसका रहस्य क्या है यह समझ में नहीं आता और कुछ समझ में आ भी गया तो हरएक विषय का उपदेश इकट्ठा नहीं मिलता, पृथक २ मिलता है। इसलिये सर्व सज्जनों के सुलभार्थ श्रीतुलसीदास जी के वचनामृतों का संग्रह थोड़े में किया है। जिन सज्जनों को समय न मिलने के कारण सम्पूर्ण रामायण का पढ़ना और समझना कठिन हो रहा है मुख्य कर उनको इनके विचारपूर्वक पढ़ने और इन्हीं के अनुसार आचरण करने से सम्पूर्ण रामायण के पाठ का फल और जीते जी ही जीवन मुक्ती प्राप्त होगी। इस छोटे से ग्रन्थ का संशोधन विशेष प्रार्थना करने पर पूज्यपाद श्री १०८ श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी शुकदेवानन्द जी महाराज ने कृपा करके किया है। इसमें दोहा चौपाई सोरठा कुल मिलाकर ७०० हैं। जिस प्रकार श्रीगीता जी में ७०० श्लोक हैं और जिस प्रकार ११३१ उपनिषदों का सार श्रीगीताजी के ७०० श्लोक हैं वैसे ही श्रीरामायण जी का सार यह तुलसीदास जी के ७०० वचनामृत हैं। आशा है कि पाठकवृन्द इस छोटी सी पुस्तक की समस्त त्रुटियों को क्षमा कर के अवश्य अपनायेंगे।

निवेदक—

मुमुक्षु आश्रम, शाहजहाँपुर

विषय-सूची

विषय			पृष्ठ संख्या
१—मंगलाचरण	...	...	१
२—गुरुवन्दना	...	...	१
३—विनय	...	...	२
४—दुष्टों के लक्षण	...	...	५
५—नीति	...	...	८
६—सतसङ्ग की महिमा	...	...	१२
७—भक्तों यानी साधकों के लक्षण		...	१४
८—भक्ती की महिमा	...	...	१६
९—नाम की महिमा	...	...	१७
१०—सन्तों यानी सिद्धों के लक्षण	...	...	१९
११—ज्ञान की महिमा	...	...	२१
१२—वशिष्ठ-भरत गीता	...	...	२३
१३—श्रीराम-लक्ष्मण गीता	...	...	२४
१४—शवरी की भक्ति	...	...	२५
१५—श्रीराम गीता	...	...	२७
१६—ज्ञान दीपक	...	...	२८
१७—सप्त प्रश्न	...	...	३०
१८—वचनामृतों का सार	...	...	३३
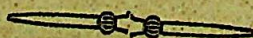
तुलसी बचनामृत :—
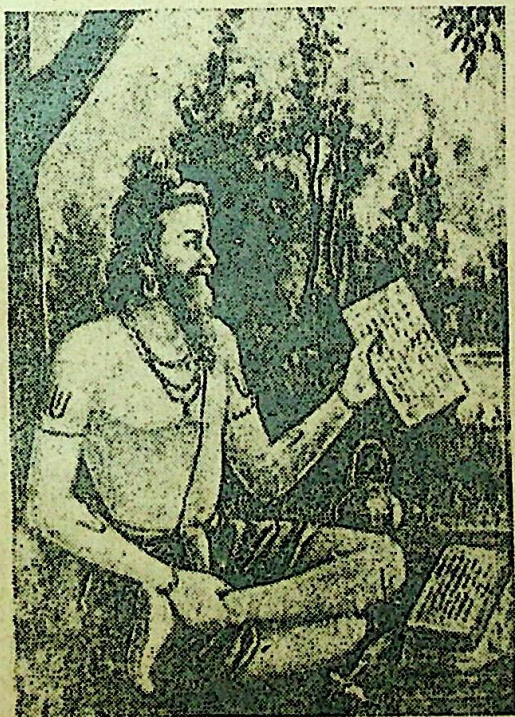
गोस्वामी तुलसीदास

* ॐ *

तुलसी वचनामृत
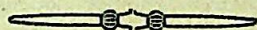
* मंगलाचरण *

श्लोक—वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम्
यमाश्रितोहि वक्रोऽपिचन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।

सो०—जेहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करिवर वदन।
करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभगुण सदन॥
मूक होइ बाचाल, पंगु चढ़इ गिरिवर गहन।
जासु कृपा सो दयाल, द्रवौ सकल कलिमल दहन॥
नील सरोरुह श्याम, तरुण अरुण वारिज नयन।
करउ सो मम उर धाम, सदा क्षीर सागर शयन॥
कुन्द इन्दु सम देह, उमा रमण करुणा अयन।
जाहि दीन पर नेह, करउ कृपा मर्दन मयन॥

* गुरु बन्दना *

सो०—बन्दौं गुरु पद कंज, कृपासिंधु नररूप हरि।
महा मोह तम पुंज, जासु वचन रवि कर निकर॥

बन्दौं गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा॥
अमिय मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भवरुज परिवारू॥

सुकृति शम्भु तन विमल विभूती। मंजुल मंगल मोद प्रसूती ॥
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी। किये तिलक गुनगन बसकरनी॥
श्रीगुरुपद नख मणिगण ज्योती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती ॥
दलन मोह तम सो सुप्रकासू। बड़े भाग्य उर आवइ जासू॥
उघरहिं विमल विलोचन हीके। मिटहि दोष दुख भव रजनी के ॥
सूझहिं रामचरितमणिमाणिक। गुप्त प्रगट जहँ जो जेहि खानिक ॥

दो०—यथा सुअंजन अंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं शैल वन, भूतल भूरि निधान ॥

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन। नयन अमिय दृगदोष विभंजन॥
तेहि कर विमल विवेक विलोचन। बरनउँ रामचरित भव मोचन॥

❋ विनय ❋

प्रनवउँ प्रथम भरत के चरना। जासु नेम व्रत जाइ न बरना॥
राम चरन पंकज मन जासू। लुबुध मधुप इव तजइ न पासू॥
वन्दौं लछिमन पद जल जाता। शीतल सुभग भगत सुख दाता॥
रघुपति कीरति विमल पताका। दण्ड समान भयो यश जाका॥
शेष सहस्र शीश जग कारन। जो अवतरेउ भूमि भय टारन॥
सदा सो सानुकूल रहु मोपर। कृपासिंधु सौमित्र गुनाकर॥
रिपुसूदन पद कमल नमामी। शूर सुशील भरत अनुगामी॥
महावीर विनवउँ हनुमाना। राम जासु यश आप बखाना॥
सो०—प्रनवउँ पवन कुमार खल वन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार वसहिं राम सर चाप धर॥

रघुपति चरन उपासक जेते। खग मृग सुर नर असुर समेते॥
बंदउँ पद सरोज सब केरे। जे बिनु काम राम के चेरे॥
शुक सनकादि भगत मुनि नारद। जे मुनिवर विज्ञान विशारद॥
प्रनवउँ सबहि धरनि धर शीशा। करहु कृपा जन जानि मुनीशा॥
जनक सुता जगजननि जानकी। अतिशय प्रिय करुना निधानकी॥
ताके युग पद कमल मनावउँ। जासु कृपा निर्मल मति पावउँ॥
बन्दउँ नाम राम रघुवर को। हेतु कृसुनु भानु हिमकर को॥
आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जलथल नभवासी॥
सियाराम मय सब जग जानी। करहुँ प्रणाम जोरि जुग पानी॥
जानि कृपा करि किंकर मोहू। सब मिलि करहु छांड़ि छलछोहू॥
निज बुधिबल भरोस मोहि नाहीं। ताते विनय करहुँ सब पाहीं॥
करन चहउँ रघुपति गुन गाहा। लघु मति मोरि चरित अवगाहा॥
कहँ रघुपति के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा॥
ज्यों वालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता॥
छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई। सुनिहहिं वाल वचन मन लाई॥

दो०—अर्थ न धर्म न काम रुचि, गति न चहउँ निर्वान।
जन्म जन्म रति राम पद, यह वरदान न आन॥

गुरु आगमन सुना रघुनाथा। द्वार आइ पद नायउ माथा॥
सादर अरघ देइ घर आने। पोड़श भाँति पूजि सनमाने॥
सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगल मूल अमंगल दमनू॥
प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू। भयउ पुनीत आज मम गेहू॥
आयसु होइ सो करौं गोसाईं। सेवक लहइ स्वामि सेवकाईं॥

मोरे सबइ एक तुम स्वामी। दीनबन्धु उर अन्तरयामी ॥
नाथ कुशल पद पंकज देखे। भयउँ भाग्य भाजन जन लेखे ॥
सिर धरि आयसु करिअ तुम्हारा। परम धरम यह नाथ हमारा ॥
जबते प्रभु पद पदम निहारे। मिटे दुसह दुख दोष हमारे ॥
जे गुरु पद अम्बुज अनुरागी। ते लोकहुँ वेदहुँ बड़ भागी ॥
मैं जानहुँ निज नाथ स्वभाऊ। अपराधिहु पर कोह न काऊ ॥
संतत मोपर कृपा करेहू। सेवक जानि तजेहु जनि नेहू ॥
चितवत पंथ रहेउँ दिन, राती। अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती ॥
नाथ सकल साधन मैं हीना। कीन्ही कृपा जानि जन दीना ॥
यह वर मांगहुँ कृपा निकेता। बसहु हृदय सिय अनुज समेता ॥
सीता राम चरन रति मोरे। अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरे ॥
नाथ जीव तव माया मोहा। सो निस्तरै तुम्हारे छोहा ॥
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दशरथ अजिरविहारी ॥
मंत्रमहामणि विषय व्याल के। मेटत कठिन कुअङ्क भाल के ॥
कबहुँ नयन मम शीतल ताता। हुइहैं निरखि श्याम मृदु गाता ॥
राम विमुख संपति प्रभुताई। जाय रही पाई बिनु पाई ॥
दीन दयालु बिरद संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी ॥
तुमहिं देखि शीतल भइ छाती। पुनि हम कहं सोइ दिन सोइराती ॥
सुनु सर्वज्ञ कृपा सुख सिन्धो। दीन दया कर आरत बन्धो ॥
मरती बार नाथ मोहिं बाली। गयउ तुम्हारे कोंछे घाली ॥
अशरण शरण बिरद संभारी। मोहि जनि तजहु भगत भयहारी ॥
मोरे प्रभु तुम गुरु पितु माता। जाउं कहां तजि पद जल जाता ॥

॥ तुमहिं विचारि कहहु नरनाहा। प्रभु तजि भवन काज मम काहा ॥
॥ बालक अबुध ज्ञान बल हीना। राखहु शरण जानि जन दीना ॥
॥ नीच टहल गृह की सब करिहौं। पद पंकज विलोकि भव तरिहौं ॥
॥ अस कहि चरन परेउ प्रभु पाहीं। अब जनि नाथ कहहु गृह जाहीं ॥
॥ देखु गरुड़ निज हृदय विचारी। मैं रघुवीर भजन अधिकारी ॥
॥ शकुनाधम सब भांति अपावन। प्रभु मोहिं कीन्ह विदित जगपावन ॥
॥ अस सुभाउ कहुँ सुनेउ न देखौं। केहि खगेश रघुपति सम लेखौं ॥
॥ शरण गएँ मोसे अघराशी। होहिं शुद्ध नमामि अविनाशी ॥
॥ मोह जलधि बोहित तुम भए। मोकहँ नाथ विविधि सुखदए ॥
॥ मोपहिं होइ न प्रतिउपकारा। बन्दौं तव पद बारहिं बारा ॥
॥ जीवन जन्म सुफल मम भयऊ। तव प्रसाद संशय सब गयऊ ॥
॥ जानेहु सदा मोहिं निज किंकर। पुनि पुनि उमा कहै विहंग वर ॥

दो०- मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर।
अस विचारि रघुवंश मणि, हरहु विषम भव पीर ॥

❀ दुष्टों के लक्षण ❀

बहुरि वंदि खल गन सति भाएँ। जे बिनु काज दाहिनेहु बाएँ ॥
सुनहु असंतन केर स्वभाऊ। भूलेहु संगति करिय न काऊ ॥
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहिं घालै हर हाई ॥

खलन हृदय अति ताप विशेषी । जरहिं सदा पर सम्पति देखी ।
जहं कहुं निन्दा सुनहिं पराई । हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई ।
काम क्रोध मद लोभ परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ।
वैर अकारण सब काहू सों । जो करु हित अनहित ताहू सों ।

स्वारथ रत परिवार विरोधी । लम्पट काम लोभ अति क्रोधी ॥
मातु पिता गुरु विप्र न मानहिं । आपु गये अरु घालहिं आनहिं ॥
करहिं मोह वश द्रोह परावा । संत संग हरि कथा न भावा ॥
अवगुण सिंधु मद मति कामी । वेद विदूषक पर धन स्वामी ॥

मानहिं मातु पिता नहिं देवा । साधुन्ह सन करवावहिं सेवा ॥
जिनके यह आचरन भवानी । ते जानेहु निशिचर सब प्रानी ॥
वेचहिं वेद धर्म दुहि लेहीं । पिशुन पराय पाप कहि देहीं ॥
कपटी कुटिल कलह प्रिय क्रोधी । वेद विदूषक विश्व विरोधी ॥

लोभी लम्पट लोल लवारा । जे ताकहिं पर धन पर दारा ॥
जो नहिं साधु संग अनुरागे । परमारथ पथ विमुख अभागे ॥
जो न भजहिं हरि नर तनु पाई । जिनहि न हरिहर सुयश सुहाई ॥
तजि श्रुति पन्थ वाम पथ चलहीं । वंचक विरचिवेश जग छलहीं ॥

पर हित हानि लाभ जिन्ह केरे । उजरे हर्ष विषाद बसेरे ॥
हरि हर यश राकेश राहु से । पर अकाज भट सहसबाहु से ॥
जे पर दोष लखहिं सह साखी । परहित घृत जिनके मन माखी ॥
पर अकाज लगि तनु परिहरहीं । जिमि हिमउपलकृषी दलगरहीं ॥

बन्दउँ खल जस शेष सरोषा । सहस वदन वरनइ पर दोषा ॥
वचन वज्र जेहि सदा पियारा । सहस नयन परदोष निहारा ॥
कौल काम वश कृपण विमूढ़ा । अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा ॥
सदा रोग वश संतत क्रोधी । राम विमुख श्रुति सन्त विरोधी ॥

तनु पोषक निंदक अघखानी । जीवन शव सम चौदह प्रानी ॥
नर शरीर धरि जे पर पीरा । करहिं ते सहहिं महाभव भीरा ॥
करहिं मोह वश नर अघ नाना । स्वारथ रत परलोक नसाना ॥
काल रूप तिन कहँ मैं ताता । शुभ अरु अशुभ कर्म फल दाता ॥

जिन हरिकथा सुनी नहीं काना । श्रवण रन्ध्र अहिभवन समाना ॥
नयनन संत दरश नहिं देखा । लोचन मोर पंख कर लेखा ॥
ते शिर कटु तूंबरि सम तूला । जे न नमत हरि गुरु पद मूला ॥
जिन्ह हरिभक्ति हृदय नहिं आनी । जीवत शव समान ते प्रानी ॥

जो नहिं करहिं राम गुन गाना । जीह सो दादुर जीह समाना ॥
कुलिश कठोर निठुर सोइ छाती । सुनि हरि चरित न जो हरषाती ॥
अज्ञ अकोविद अन्ध अभागी । काई विषय मुकुर मन लागी ॥
लम्पट कपटी कुटिल विशेषी । सपनेहु सन्त सभा नहिं देखी ॥

कहहिं ते वेद असम्मत वानी । जिनहिं न सूझ लाभ नहिं हानी ॥
मुकुर मलिन अरु नयन विहीना । राम रूप देखहिं किमि दीना ॥
वातुल भूत विवश मतवारे । ते नहिं बोलहिं वचन सम्हारे ॥
जिन्ह कृत महामोह मद पाना । तिन कर कहा करिय नहिं काना ॥

वायस पालिय अति अनुरागा । होहि निरामिष कबहुँ कि कागा ॥
हंसिहहिं कूर कुटिल कुविचारी । जे पर दूषण भूषण धारी ॥
खल परिहास होइ हित मोरा । काक कहहिं कल कंठ कठोरा ॥
जे जनमें कलि काल कराला । करतब वायस वेष मराला ॥

चलत कुपंथ वेद मग छाँड़े । कपट कलेवर कलि मल भाँड़े ॥
अतिखल जे विषयी बक कागा । यहि सर निकट न जाँय अभागा ॥
सम्बुक भेक सिवार समाना । इहां न विषय कथा रस नाना ॥
तेहि कारण आवत हिय हारे । कामी काक बलाक विचारे ॥

आवत यहि सर अति कठिनाई। राम कृपा बिनु आइ न जाई॥
गृह कारज नाना जंजाला। ते अति दुर्गम शैल बिशाला॥

दो०—काम क्रोध मद लोभ रत, गृहासक्त दुख रूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं, मूढ़ परे तम कूप॥
पर द्रोही पर दार रत, पर धन पर अपवाद।
ते नर पामर पापमय, देह धरे मनुजाद॥
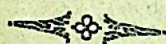
❀ नीति ❀

जो परलोक यहां सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदय दृढ़ गहहू॥
मातु पिता गुरु प्रभु की बानी। बिनहिं बिचार करिय शुभ जानी॥
पुत्रवती युवती जग सोई। रघुवर भक्त जासु सुत होई॥
न तरु बाँझ भलि बादि बियानी। राम विमुख सुत ते हित हानी॥
साधु समाज न जाकर लेखा। राम भक्त महं जासु न रेखा॥
जाय जियत जग सो महिभारू। जननी जोवन बिटप कुठारू॥
सब जग ताहि अनल ते ताता। जो रघुवीर विमुख सुनु भ्राता॥
जो अपराध भक्त कर करई। राम रोष पावक सो जरई॥
कर्म प्रधान बिश्व रचि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा॥
शुभ अरु अशुभ कर्म फलचारी। ईश देइ फल हृदय विचारी॥
करै जो कर्म पाव फल सोई। निगमनीति अस कह सब कोई॥
का वर्षा जब कृपी सुखाने। समय चूकि पुनि का पछिताने॥
लोभी लोलुप कीरति चहई। अकलंकता कि कामी लहई॥
सेवक सुख चह मान भिखारी। व्यसनी धन शुभगति व्यभिचारी॥
सङ्ग ते यती कुमंत्र ते राजा। मान ते ज्ञान पान ते लाजा॥

राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा । हरिहिं समर्पे बिनु सतकर्मा ॥
बिद्या बिनु बिवेक उपजाये । श्रम फल पढ़े किये अरु पाये ॥
बादि बसन बिनु भूषण भारू । बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू ॥
सरुज शरीर बादि सब भोगा । बिनु हरि भगति जाय तप योगा ॥
जाय जीव बिनु देह सुहाई । बादि मोरि सब बिनु रघुराई ॥
राम भक्ति तजि चह कल्याना । सो नर अधम शृगाल समाना ॥
सोह न राम प्रेम बिनु ज्ञाना । कर्णधार बिनु जिमि जलयाना ॥
को न कुसंगति पाय नसाई । रहै न नीच मते चतुराई ॥
परहित बस जिनके मन माहीं । तिन कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
सुनहु उमा ते लोग अभागी । हरि तजि होहिं विषय अनुरागी ॥
सिमिट २ जल भरहिं तलावा । तिमि सद्गुण सज्जन पहँ आवा ॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना । जिमि बुध तजहिं मोह मद माना ॥
ऊसर बर्षे तृण नहिं जामा । सन्त हृदय जस उपज न कामा ॥
सुखी मीन जहं नीर अगाधा । जिमि हरि शरण न एकौ बाधा ॥
जिमि सरिता सागर महं जाही । यद्यपि ताहि कामना नाहीं ॥
तिमि सुख सम्पति बिनहिं बुलाये । धर्म-शील पहं जाहिं सुभाये ॥
नाथ विषय सम मद कछु नाहीं । मुनिमन मोह करहिं क्षण माहीं ॥
अतिशय प्रबल देव तव माया । छूटहि तबहिं करहु जब दाया ॥
लोभ पास जेहि गर न वंधाया । सो नर तुम समान रघुराया ॥
तजि माया सेइय परलोका । मिटैं सकल भव सम्भव सोका ॥
सोइ गुणज्ञ सोई बड़ भागी । जो रघुबीर चरण अनुरागी ॥
जन्म मरण सब दुख सुख भोगा । हानि लाभ प्रिय मिलन वियोगा ॥
काल कर्म बस होहिं गुसाईं । बरबस राति दिवस की नाईं ॥
सुख हर्षहिं जड़ दुख बिलखाहीं । दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं ॥

जो रघुवीर चरण चित लावै । तेहि सम धन्य न आन कहावै ॥
जहां सुमति तहं सम्पति नाना । जहां कुमति तहँ बिपति निदाना ॥
वरु भल वास नरक कर ताता । दुष्ट संग जनि देइ बिधाता ॥
कायर मन कर एक अधारा । दैव दैव आलसी पुकारा ॥
सठ सन विनय कुटिलसनप्रीती । सहज कृपण सन सुन्दर नीती ॥
ममता रत सन ज्ञान कहानी । अति लोभी सन बिरति बखानी ॥
क्रोधिहिं सम कामिहिं हरि कथा । ऊसर बीज बये फल यथा ॥
शिव द्रोही मम दास कहावै । सो नर सपनेहुँ मोहि न भावै ॥
शंकर विमुख भक्ति चह मोरी । सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥

सो०—गुरु बिनु होय कि ज्ञान, ज्ञान कि होय विराग बिनु ।
गावहिं वेद पुरान सुख, कि लहहिं हरि भक्ति बिनु ॥

बिनु सन्तोष न काम नसाहीं । काम अछत सुख सपनेहु नाहीं ॥
राम भजन बिनु मिटहि कि कामा । थल विहीन तरु कबहुंकि जामा ॥
बिनु बिज्ञान कि समता आवै । कोउ अवकाश कि नभ बिनु पावै ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई । बिनु महि गन्ध कि पावे कोई ॥
बिनु तेज कि करु विस्तारा । जल बिनु रस कि होइ संसारा ॥
शील कि मिल बिनु बुध सेवकाई । जिमि बिनु रूप न तेज गुसाईं ॥
निज सुख बिनु मन होइकि थीरा । परस कि होय बिहीन समीरा ॥
कवनेहुँ सिद्धिकिबिनु विश्वासा । बिनु हरिभजन न भवभय नासा ॥

दो०—बिनु विश्वास भक्ति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम ।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ, जीव न लह विश्राम ॥

गुरु बिनु भव निधि तरै न कोई । जो विरंचि शङ्कर सम होई ॥
जप तप मख सम दम ब्रत दाना । विरति विवेक योग विज्ञाना ॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा । तेहि बिनु कोउ न पावे च्छेमा ॥

सोइ पावन सोइ सुभग शरीरा । जो तनु पाय भजिय रघुवीरा ॥
राम बिमुख लहि बिधि सम देही । कवि कोविद न प्रशंसहि तेही ॥
देखेंउ सब करि कर्म गोसाईं । सुखी न भयउँ अवहिं की नाईं ॥
गुरु शिष अन्ध वधिर कर लेखा । एक न सुनै एक नहिं देखा ॥

हरै शिष्य धन शोक न हरई । सो गुरु घोर नरक महँ परई ॥
सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा । बुध नहिंकरहिं अधम कर संगा॥
जो शठ गुरु सन ईर्षा करहीं । रौरव नर्क कल्प शत परहीं ॥
राखैं गुरु जो कोप विधाता । गुरु विरोध नहिं कोउ जगत्राता॥

कामी पुनि कि रहै अकलंका । पर द्रोही कि होय निकलंका ॥
वंश कि रह द्विज अनहित कीन्हें । कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हें ॥
काहू सुमति कि खल संग जामी । शुभगति पाव कि परतिय गामी ॥
राज कि रहै नीति बिनु जाने । अघ कि रहै हरि चरित बखाने ॥

भव कि परहिं परमारथ बिंदक । सुखी कि होहिं कबहुँ पर निंदक॥
पावन यश कि पुन्य बिनु हाई । बिनु अघ अयश कि पावै कोई ॥
लाभ कि किछु हरि भक्ति समाना । जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना ॥
हानि कि जग यहि सम किछु भाई । भजिय न रामहिं नरतनु पाई ॥

अघ कि बिना तामस कछु आना । धर्म कि दया सरिस हरियाना ॥
जहँ लगि साधन वेद बखानी । सब कर फल हरि भक्ति भवानी॥
राम चरण पंकज प्रिय जिनहीं । विषय भोगवश करहिं कि तिनहीं
तब लगि हृदय बसत खल नाना । लोभ मोह मत्सर मद माना ॥

जब लगि उर न बसत रघुनाथा । धरे चाप शायक कटि भाथा ॥
सुधा समुद्र समीप बिहाई । मृग जल निरखि मरहु कत धाई॥
अब सोइ यतन करहु तुम ताता । देखेंउ नयन श्याम मृदुगाता ॥

तृषित निरखि र विकर भ्रमवारी। फिरहिं मृगा इव जीव दुखारी।
जहं तहं रहैं पथिक थकि नाना। जिमि इन्द्री गण उपजे ज्ञाना॥
रस रस सोष सरित सर पानी। ममता त्यागि करहिं जिमि ज्ञानी॥
सरदातप निशि शशि अपहरई। सन्त दरश जिमि पातक टरई॥
उदासीन नित रहिय गोसाईं। खल परिहरिय स्वान की नाईं॥

दो०—काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक कर पन्थ।
सब परिहरि रघुवीरहिं भजहु भजहिं जेहि सन्त॥
सचिव वैद्य गुरू तीनि जो, प्रिय बोलहिं भय आश।
राज धर्म तनु तीन कर, होहि बेगि ही नाश॥
भूमि जीव संकुल रहैं, गये शरद ऋतु पाय।
सदगुरु मिले ते जाँहि जिमि, संशय भ्रम समुदाय॥

❀ सतसंग की महिमा ❀

बन्दउँ प्रथम महीसुर चरणा। मोह जनित संशय सब हरणा॥
सुजन समाज सकल गुण खानी। करौं प्रणाम सप्रेम सुबानी॥
साधु चरित शुभ सरिस कपासू। निरस विशद गुणमय फल जासू॥
जो सहि दुख पर छिद्र दुरावा। बन्दनीय जेहि जग यश पावा॥
मुद मँगल मय सन्त समाजू। जो जग जंगम तीरथ राजू॥
राम भक्ति जहं सुरसरि धारा। सरस्वति ब्रह्म विचार प्रचारा॥
विधि निषेधमय कलिमलहरणी। कर्म कथा रवि नन्दिनि वरणी॥
हरि हर कथा विराजत वेनी। सुनत सकल मुद मंगल देनी॥
बट विश्वास अचल निज धर्मा। तीरथ राज समाज सुकर्मा॥
सबहिं सुलभ सब दिन सब देशा। सेवत सादर समन कलेशा॥
अकथ अलौकिक तीरथ राऊ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ॥

दो०—सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु समाज प्रयाग॥

मज्जन फल पेखिय ततकाला। काक होहिं पिक बकहु मराला॥
सुनि आश्चर्य करै जनि कोई। सत संगति महिमा नहिं गोई॥
बाल्मीकि नारद घट योनी। निज निज मुखन कही निज होनी॥
जलचर थलचर नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना॥
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहि जतन जहां जेहि पाई॥
सो जानब सतसग प्रभाऊ। लोकहु वेद न आन उपाऊ॥
बिनु सतसंग विवेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई॥
सत संगति मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सबसाधन फूला॥
शठ सुधरहिं सत संगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई॥
बिधिबस सुजन कुसंगति परहीं। फणि मणिसम निजगुण अनुसरहीं
बिधि हरि हर कबि कोविद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी॥
सो मोसन कहि जात न कैसे। शाक वणिक मणि गुण गण जैसे

दो०—बन्दौं सन्त समान चित, हित अनहित नहिं कोय।
अञ्जलि गत शुभ सुमन जिमि, सम सुगन्ध कर दोय॥
सन्त सरल चित जगत हित, जानि सुभाउ सनेहु।
बाल विनय सुनि करि कृपा, रामचरण रति देहु॥

भक्ति स्वतन्त्र सकल सुखखानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
पुन्य पुञ्ज बिनु मिलहिं न सन्ता। सत संगति संसृति कर अन्ता॥
सब कर फल हरि भक्ति सुहाई। सो बिनु सन्त न काहू पाई॥
सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दण्ड भरि एकौ बारा॥
बड़े भाग्य पाइय सतसंगा। बिनहिं प्रयास होय भव भंगा॥
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता॥

संत विशुद्ध मिलहिं पुनि तेही। राम कृपा करि चितवहिं जेही॥
जब बहु काल करिय सतसंगा। तब होइय यह संशय भंगा॥
मोरे मन प्रभु अस विश्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चन्दन तरु हरि सन्त समीरा॥
अस विचार कर जो सत संगा। राम भक्ति तेहि सुलभ विहंगा॥

दो०—गिरजा संत समागम, सम न लाभ कछु आन।
विनु हरि कृपा न होय सो, गावहिं वेद पुरान॥
संत संग अपवर्ग कर, कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कवि कोविद, श्रुति पुराण सद ग्रन्थ॥

धन्य घरी सोइ जब सत संगा। धन्य जन्म द्विज भक्ति अभंगा॥
राम कथा के तेइ अधिकारी। जिनके सतसंगति अति प्यारी॥
सदा सुनहिं सादर नर नारी। ते सुरवर मानस अधिकारी॥
जो नहाइ चह यहि सर भाई। तो सतसंग करहु मन लाई॥
काम क्रोध मद मोह नसावन। विमल विवेक विराग बढ़ावन॥
सादर मज्जन पान किये ते। मिटहिं पाप परिताप हिये ते॥
जिन यह वारि न मानस धोये। ते कायर कलिकाल विगोये॥
राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस विशेष जाना तिन नाहीं॥
राम कथा सुन्दर करतारी। संशय विहग उड़ावन हारी॥

दो०—विनु सतसंग न हरि कथा, तेहि विनु मोह न भाग।
मोह गये विनु राम पद, होइ न दृढ़ अनुराग॥
तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक अङ्ग।
तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग॥

❀ भक्तों यानी साधकों के लक्षण ❀

सुनहु राम अब कहउँ निकेता। बसहु जहाँ सिय लषण समेता॥

जिनके श्रवण समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभगसरि नाना ॥
भरहिं निरन्तर होंहि न पूरे। तिनके हृदय सदन तव रूरे ॥
लोचन चातक जिन करि राखे। रहहिं दरश जलधर अभिलाषे ॥
तुमहिं निवेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहीं ॥
शीश नवहिं सुर गुरु द्विज देखी। प्रीति सहित करि विनय विशेषी
कर निज करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदय नहिं दूजा ॥
चरण राम तीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिनके मन माहीं ॥
मन्त्र राज नित जपहिं तुम्हारा। पूजहि सहित तुमहिं परिवारा॥
तर्पण होम करहिं विधि नाना। विप्र जेवांइ देहिं बहु दाना ॥
तुमते अधिक गुरुहिं जिय जानी। सकल भाव सेवहिं सनमानी ॥

दो०—सब कर मांगहि एक फल, राम चरण रति होउ।
तिनके मन मन्दिर बसहु, सिय रघुनन्दन दोउ ॥

काम क्रोध मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ॥
जिनके कपट दम्भ नहिं माया। तिनके हृदय बसहु रघुराया ॥
सबके प्रिय सबके हितकारी। दुख सुख सरिस प्रशंसागारी ॥
कहहिं सत्य प्रिय वचन विचारी। जागत सोवत शरण तुम्हारी ॥
तुमहि छाँड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिनके मन माहीं ॥
जननी सम जानहि पर नारी। धन पराय विष ते विष भारी ॥
जे हरषहिं पर सम्पति देखी। दुखित होंहि पर विपति विशेषी॥
अवगुण तजि सबके गुण गहहीं। विप्र धेनु हित संकट सहहीं ॥
नीति निपुण जिनकी जग लीका। घर तुम्हार तिनकर मन नीका॥
गुण तुम्हार समुझहिं निज दोसू। जेहि सब भांति तुम्हार भरोसू॥
राम भक्ति प्रिय लागहि जेही। तेहि उर बसहु सहित वैदेही ॥
जाति पांति धन धर्म बड़ाई। प्रिय परिवार सदन समदाई ॥

सब तजि तुमहिं रहैं लवलाई । तिनके हृदय वसहु रघुराई ॥
मन क्रम वचन छांड़ि चतुराई । भजतहिं कृपा करहिं रघुराई ॥
निर्मल मन जन सो मोहिं पावा । मोहि कपट छल छिद्र न भावा ॥

दो०—निन्दा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज ।
ते सज्जन मम प्राण प्रिय, गुण मन्दिर सुख पुंज ॥
कर्म वचन मन छांड़ि छल, जब लगि जन न तुम्हार ।
तब लगि सुख सपनेहुँ नहीं, किये कोटि उपचार ॥

❀ भक्ती की महिमा ❀

राम भक्ति चिन्तामणि सुन्दर । वसै गरुण जाके उर अन्तर ॥
परम प्रकाश रूप दिन राती । नहिं कछु चहिय दिया घृत बाती ॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा । लोभ बात नहिं ताहि बुझावा ॥
खल कामादि निकट नहि जाहीं । बसै भक्ति मणि जेहिं उरमाहीं ॥
व्यापहिं मानस रोग न भारी । जिनके वश सब जीव दुखारी ॥
राम भक्ति मणि उर वश जाके । दुख लवलेश न सपनेहुं ताके ॥
चतुर शिरोमणि ते जग माहीं । जे मणि लागि सुयतन कराहीं ॥
सो मणि यदपि प्रगट जग अहई । राम कृपा विनु नहिं कोउलहई ॥
सुगम उपाय पायवे केरे । नर हत भाग्य देत भट भेरे ॥
पावन पर्वत वेद पुराना । राम कथा रुचिराकर नाना ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी । ज्ञान विराग नयन उरगारी ॥
भाव सहित जो खोदै प्रानी । पाव भक्तिमणि सब सुख खानी ॥
राम भक्ति निरुपम निरुपाधी । बसै जासु उर सदा अबाधी ॥
भक्ति करत बिनु यतन प्रयासा । संसृति मूल अविद्या नासा ॥
अस हरि भक्ति सुगम सुखदाई । को अस मूढ़ न जाहि सुहाई ॥
निज अनुभव मैं कहेंउ खगेशा । बिनु हरि भजन न जाहिंकलेशा ॥

कबहुँ काल नहिं व्यापहिं तोहीं । सुमिरहु भजहु निरन्तर मोहीं ॥
नट कृत विकट कपट खगराया । नट सेवकहिं न व्यापहिं माया ॥
सो नर इन्द्रजाल नहिं भूला । जापर होइ सो नट अनुकूला ॥
काल कर्म नहिं व्यापहिं ताही । रघुपति चरण प्रीति अति जाही ॥
तुम कृपालु जापर अनुकूला । ताहि न व्याप त्रिविध भव शूला ॥
तब ते मोहिं न व्यापी माया । जबते रघुनायक अपनाया ॥
हरि सेवकहिं न व्याप अविद्या । प्रभु प्रेरित तेहि व्यापहि विद्या ॥
यहि विचार पंडित मोहिं भजहीं । पायेहु ज्ञान भक्ति नहिं तजहीं ॥
भक्तिहि सानुकूल रघुराया । ताते तेहि डरपति अति माया ॥
भक्ति हीन सुख कवनेहुं काजा । अस विचारि बोलेउ खगराजा ॥
भक्ति हीन सुख गुण सब ऐसे । लवण विना बहु व्यञ्जन जैसे ॥
भक्ति हीन विरञ्चि किन होई । सब जीवहु सम प्रिय मोहिं सोई ॥
भक्तिवन्त अति नीचहु प्राणी । मोहि प्राण प्रिय सुनु मम वाणी ॥
जे अस प्रभु न भजहिं भ्रम त्यागी । ज्ञान रंक मति मन्द अभागी ॥
सुनु खगेश हरि भक्ति बिहाई । जो सुख चाहहिं आन उपाई ॥
ते शठ महा सिन्धु बिनु तरणी । पैरि पार चाहत जड़ करणी ॥

दो०—सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि ।
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धान्त विचारि ॥
विरति चर्म अस ज्ञान मद, लोभ मोह रिपु मारि ।
जय पाइ सोइ हरि भगति, देखु खगेश विचारि ॥

❀ नाम की महिमा ❀

दो०—राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरउ, जो चाहसि उजियार ॥

नाम जीह जपि जागहिं योगी । विरति विरञ्चि प्रपञ्च वियोगी ॥

ब्रह्म सुखहिं अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहिं तेऊ
साधक नाम जपहिं लव लाये। होहिं सिद्ध अणिमादिक पाये
अगुण सगुण दोउ सुगम नामते। कबहुं नाम बड़ ब्रह्म राम ते
नाम लेत भव सिन्धु सुखाहीं। करहु विचार सुजन मन माहीं
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती। विनु श्रम प्रवल मोह दल जीती
शुक सनकादि सिद्धि मुनि योगी। नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी।
नारद जानेउ नाम प्रतापू। जग प्रिय हरिहर हरिप्रिय आपू
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भक्त शिरोमणि भे प्रहलादू।
ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नाऊँ। पायउ अचल अनूपम ठाऊँ।
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने वश करि राखेउ रामू।
अपत अजामिल गज गणिकाऊ। भये मुक्त हरि नाम प्रभाऊ।
कहौं कहां लगि नाम बड़ाई। राम न सकहिं नाम गुण गाई।

दो०—नाम राम को कल्प तरु, कलि कल्याण निवास।
जो सुमिरत भयो भांग ते, तुलसी तुलसीदास॥

चहुं युग तीन काल तिहुंलोका। भये नाम जपि जीव विशोका।
वेद पुराण सन्त मत एहू। सकल सुकृत फल राम सनेहू॥
नहिं कलि कर्म न भक्ति विवेकू। राम नाम अवलम्बन एकू।
नाम कामतरु काल कराला। सुमिरत शमन सकल जग जाला॥
राम नाम कलि अभिमत दाता। हित परलोक लोक पितु माता॥
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भव सिन्धु अपारा॥
उलटा नाम जपत जग जाना। वालमीक भये ब्रह्म समाना॥
सनमुख होय जीव महि जबहीं। जन्म कोटि अघ नाशउँ तबहीं॥
ऐसे बिनु हरि भजन खगेशा। मिटहिं न जीवन केर कलेशा॥

कलियुग केवल हरि गुण गाहा । गावत नर पावहिं भव थाहा ॥
कलियुग योग यज्ञ नहिं ज्ञाना । एक अधार राम गुण गाना ॥
सब भरोस तजि जो भज रामहिं । प्रेम समेत गाव गुण ग्रामहिं ॥
सो भव तरु कछु संशय नाहीं । नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ॥
यहि कलि काल न साधन दूजा । योग यज्ञ जप तप व्रत पूजा ॥
तामस बहुत रजोगुण थोरा । कलि प्रभाव विरोध चहुं ओरा ॥
रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं । सन्तत सुनिय राम गुण ग्रामहिं ॥
दो०—तब लगि कुशल न जीव कहं, सपनेहुँ मन विश्राम ।
जब लगि भजत न राम पद, शोक धाम तजि काम ॥

❀ सन्तों यानी सिद्धों के लक्षण ❀

सुनु मुनि सन्तन के गुण कहहूं । जेहिते मैं उनके वश रहहूं ॥
षट विकार जित अनघ अकामा । अचल अकिंचन शुचि सुखधामा
अमित बोध अनीह मित भोगी । सत्य सार कवि कोविद योगी ॥
सावधान मानद मद हीना । धीर धर्म गति परम प्रवीना ॥
दो०—गुणागार संसार दुख, रहित विगत संदेह ।
तजि मम चरण सरोज प्रिय, तिन कहं देह न गेह ।
निज गुण श्रवण सुनत सकुचाहीं । पर गुण सुनत अधिक हर्षाहीं ॥
शम दम नियम नीति नहिं डोलहिं । परुष वचन कबहूँ नहिं बोलहिं ॥
सम शीतल नहिं त्यागहिं नीती । सरल स्वभाव सबहिं सन प्रीती ॥
जप तप व्रत दम संयम नेमा । गुरु गोविन्द विप्र पद प्रेमा ॥
श्रद्धा क्षमा मयत्री दाया । मुदिता मम पद प्रीति अमाया ॥
विरति विवेक विनय विज्ञाना । बोध यथारथ वेद पुराना ॥
दम्भ मान मद करहिं न काऊ । भूलि न देहिं कुमारग पाऊ ॥
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला । हेतु रहित परहित रत शीला ॥

सुनु मुनि साधुन के गुण जेते। कहि न सकहिं शारद श्रुति तेते ॥
क्षमा संत की यही बड़ाई। मंद करत जो करै भलाई ॥
संत असंतन की अस करणी। जिमि कुठार चंदन आचरणी ॥
कोमल चित दीनन पर दाया। मन वच कर्म मम भक्त अमाया ॥
सबहिं मान प्रद आपु अमानी। भरत प्राण सम ते मम प्राणी ॥
विगत काम मम नाम परायन। शांति विरति विनती मुदितायन॥
शीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रेम धर्म जन यत्री ॥
यह सब लक्षण बसहिं जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर ॥
सरल स्वभाव न मन कुटिलाई। यथा लाभ सन्तोष सदाई ॥
मोर दास कहाय नर आसा। करै तो कहहु कहा विश्वासा ॥
वहुत कहौं का कथा बढ़ाई। यह आचरण वश्य मैं भाई ॥
बैर न विग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा ॥
अनारम्भ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दक्ष विज्ञानी ॥
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृण सम विषय स्वर्ग अपवर्गा॥
भक्ति पक्ष हठ नहिं शठताई। दुष्ट कर्म सब दूरि विहाई ॥
अस सज्जन मम उर बस कैसे। लोभी हृदय बसत धन जैसे ॥
जननीं जनक बन्धु सुत दारा। तन धन धाम सुहृद परिवारा ॥
सबकी ममता ताग बटोरी। मम पद मनहिं बांधि बटि डोरी ॥
समदर्शी इच्छा कछु नाहीं। हर्ष शोक भय नहिं मन मांहीं ॥
संत हृदय नवनीति समाना। कहा कविन पै कहि नहिं जाना ॥
निज परिताप द्रवै नवनीता। पर दुख द्रवहि सो संत पुनीता ॥
संत विटप सरिता गिरि धरणी। परहित हेतु इनन्ह की करणी ॥
तेहिते कहहिं सन्त श्रुति टेरे। परम अकिंचन प्रिय हरि केरे ॥

दो०—मम गुण ग्राम नाम रत, गत ममता मद मोह।
ताकर सुख सोइ जानिइ, चिदानंद संदोह ॥

❀ ज्ञान की महिमा ❀

झूठेउ सत्य जाहि बिनु जाने। जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने॥
जेहि जाने जग जाय हेराई। जागे यथा सपन भ्रम जाई॥
उमा राम विषयक अस मोहा। नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा॥
निज भ्रम नहिं समुझहिं अज्ञानी। प्रभु पर दोष धरहिं जड़ प्रानी॥
विषय करन सुर जीव समेता। सकल एक ते एक सचेता॥
सब कर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई॥
जगत प्रकाश्य प्रकाशक रामू। माया धीश ज्ञान गुण धामू॥
जासु सत्यता ते जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया॥

दो०—रजत सीप महं भास जिमि, यथा भानु कर वारि।
यदपि मृषा तिहुं काल सोइ, भ्रम न सकै कोउ टारि॥

यहि विधि जग हरि आश्रित रहई। यदपि असत्य देत दुख अहई॥
ज्यों सपने शिर काटै कोई। बिनु जागे दुख दूरि न होई॥
जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई। गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई॥
राम सच्चिदानन्द दिनेशा। नहिं तहं मोह निशा लवलेशा॥
ज्ञान अखण्ड एक सीतावर। माया वश्य जीव सचराचर॥
ज्ञान विराग योग विज्ञाना। ये सब पुरुष सुनहु हरियाना॥
पुरुष प्रताप प्रवल सब भांती। अवला अवल सहज जड़ जाती॥
जो सब के रह ज्ञान एक रस। ईश्वर जीवहिं भेद कहौ कस॥
परवश जीव स्ववश भगवन्ता। जीव अनेक एक श्रीकन्ता॥
हर्ष विषाद ज्ञान अज्ञाना। जीव धर्म अहमित अभिमाना॥
सुरसरि जल कृत वारुणि जाना। कबहुँ न सन्त करहिं तेहि पाना॥
सुरसरि मिले सो पावन कैसे। ईश अनीशहि अन्तर तैसे॥
सरिता जल जलनिधि महं जाई। होय अचल जिव जिमि हरिपाई॥

हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रगट होयं भगवाना ॥
अगुण अरूप अलख अज जोई। भक्त प्रेम वश सगुण सो होई ॥
जो गुण रहित सगुण सो कैसे। जलहिम उपल बिलग नहिं जैसे ॥
एक दारु गत देखिय एकू। पावक युग सम ब्रह्म विवेकू ॥
उपजहिं जासु अंश ते नाना। शम्भु विरञ्चि विष्णु भगवाना ॥
नर इव चरित करत विधि नाना। सदा स्वतन्त्र राम भगवाना ॥

दो०—यथा अनेकन वेष धरि, नृत्य करै नट कोय।
जोइ जोइ भाव देखावई, आप होय नहिं सोय ॥

चिदानन्दमय देह तुम्हारी। विगत विकार ज्ञान अधिकारी ॥
जग पेखन तुम देखन हारे। विधि हरि शम्भु नचावन हारे ॥
सोइ जाने जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहिं तुमहिं होइ जाई ॥
तुम्हरी कृपा तुमहिं रघुनन्दन। जानत भक्त भक्तउर चंदन ॥
नर तनु धरेउ संत सुर काजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा ॥
राम देखि सुनि चरित तुम्हारे। जड़ मोहहिं बुध होयं सुखारे ॥
तुम जो कहहु करहु सब सांचा। जस काछिय तस चाहिय नाचा ॥
योग वियोग भोग भल मन्दा। हित अनहित मध्यम भ्रम फन्दा ॥
जन्म मरण जहं लगि जग जालू। संपति विपति कर्म अरु कालू ॥
धरणि धाम धन पुर परिवारू। स्वर्ग नर्क जहं लगि व्यवहारू ॥
देखिय सुनिय गुनिय मन मांहीं। मोह मूल परमारथ नाहीं ॥

दो०—स्वपने होय भिखारि नृप, रङ्क नाकपति होय।
जागे हानि न लाभ कछु, तिमि प्रपंच जिय जोय ॥

मोह निशा सब सोवनिहारा। देखहिं स्वप्न अनेक प्रकारा ॥
यहि जग यामिनि जागहिं योगी। परमारथी प्रपंच वियोगी ॥
जानिय तबहिं जीव जग जागा। जब सब विषय विलास विरागा ॥

होय विवेक मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरण अनुरागा ॥
सखा परम परमारथ येहू। मन क्रम वचन राम पद नेहू ॥
राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अविगत अलख अनादि अनूपा॥
मुनिवर जतन करत जेहि लागी। भूप राज तजि होयं विरागी ॥
रमा विलास राम अनुरागी। तजत बमन इव नर बड़भागी ॥
रामहिं केवल प्रेम पियारा। जानि लेहु जो जाननि हारा ॥
जाने विनु न होय परतीती। विनु परतीत होय नहिं प्रीती ॥
प्रीति विना नहिं भक्ति दृढ़ाई। जिमि खगेश जल की चिकनाई॥

सो०—उमा राम गुण गूढ़, पण्डित मुनि पावहिं विरति।
पावहिं मोह विमूढ़, जे हरि विमुख न धर्म रति ॥

गूढउ तत्व न साधु दुरावहिं। आरत अधिकारी जहं पावहिं ॥
तारा विकल देखि रघुराया। दीन्ह ज्ञान हर लीन्हीं माया ॥
छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित यह अधम शरीरा ॥
प्रगट सो तनु तव आगे सोवा। जीव नित्य तुम केहि लगि रोवा॥
बहु प्रकार तेहि ज्ञान सिखावा। देह जनित अभिमान छुड़ावा॥
ममता तरुण तमी अंधियारी। राग द्वेष उलूक दुखकारी ॥
तव लगि बसत जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहीं॥

दो०—माया सम्भव सकल भ्रम, अब नहिं व्यापहिं तोहिं।
जानेसु ब्रह्म अनादि अज, अगुण गुणाकर मोहिं ॥

❀ बशिष्ठ-भरत गीता ❀

दो०—सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलखि कहेउ मुनि नाथ।
हानि लाभ जीवन मरण, यश अपयश विधि हाथ ॥

अस विचारि केहि दीजिय दोषू। व्यर्थ काहि पर कीजिय रोषू ॥
तात विचार करहु मन माहीं। शोच योग्य दशरथ नृप नाहीं ॥

सोचिय विप्र जो वेद विहीना । तजि निज धर्म विषय लवलीना ॥
सोचिय नृपति जो नीति न जाना । जेहि न प्रजा प्रिय प्राण समाना ॥
सोचिय वैश्य कृपण धनवानू । जो न अतिथि शिव भक्त सुजानू ॥
सोचिय शूद्र विप्र अपमानी । मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी ॥
सोचिय पुनि पति वंचक नारी । कुटिल कलह प्रिय इच्छाचारी ॥
सोचिय वटु निज व्रत परिहरई । जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई ॥
दो०—सोचिय ग्रही जो मोह वश, करै कर्म पथ त्याग ।
सोचिय यती प्रपँच रत, विगत विवेक विराग ॥
वैखानस सोइ सोचन योगू । तप बिहाय जेहि भावै भोगू ॥
सोचिय पिशुन अकारण क्रोधी । जननि जनक गुरु बन्धु बिरोधी ॥
सब विधि शोचिय पर अपकारी । निज तनु पोषक निर्दय भारी ॥
सोचनीय सबही विधि सोई । जो न छांड़ि छल हरिजन होई ॥
सोचनीय नहिं कौशल राऊ । भुवन चारि दस प्रगट प्रभाऊ ॥

❀ श्रीराम-लक्ष्मण गीता ❀

एक बार प्रभु सुख आसीना । लक्ष्मण वचन कहे छल हीना ॥
सुर नर मुनि सचराचर साईं । मैं पूंछौं निज प्रभु की नाईं ॥
मोहिं समुझाय कहौ सोइ देवा । सब तजि करौं चरण रज सेवा ॥
कहहु ज्ञान विराग अरु माया । कहहु सो भक्ति करहु जेहि दाया ॥
दो०—ईश्वर जीवहिं भेद प्रभु, सकल कहहु समुझाइ ।
जाते होय चरण रति, शोक मोह भ्रम जाय ॥
थोरे महं सब कहौं बुझाई । सुनहु तात मति मन चित लाई ॥
मैं अरु मोर तोर तैं माया । जेहि वश कीन्हें जीव निकाया ॥
गो गोचर जहं लगि मन जाई । सो सब माया जानेहु भाई ॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम सोऊ । विद्या अपर अविद्या दोऊ ॥

एक दुष्ट अतिशय दुख रूपा। जा वश जीव परा भव कूपा॥
एक रचै जग गुण वश जाके। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताके॥
ज्ञान मान जहं एकौ नाहीं। देखत ब्रह्म रूप सब माहीं॥
कहिय तात सो परम विरागी। तृण सम सिद्धि तीनि गुण त्यागी॥

दो०—माया ईश न आपु कहं, जानि कहिय सो जीव।
बन्द मोक्षप्रद सर्व पर, माया प्रेरक सीव॥

धर्म ते विरति योग ते ज्ञाना। ज्ञान मोक्ष प्रद वेद बखाना॥
जाते वेगि द्रवौं मैं भाई। सो मम भक्ति भक्त सुखदाई॥
सो स्वतन्त्र अवलम्ब न आना। तेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना॥
भक्ति तात अनुपम सुख मूला। मिलइ जो सन्त होंहि अनुकूला॥
भक्ति के साधन कहौं बखानी। सुगम पन्थ मोहिं पावहिं प्रानी॥
प्रथमहिं विप्र चरण अति प्रीति। निज निज धर्म निरत श्रुति रीती॥
यहिकर फल पुनि विषय विरागा। तब मम चरण उपज अनुरागा॥
श्रवणादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं॥
सन्त चरण पंकज अति प्रेमा। मन क्रम वचन भजन दृढ़ नेमा॥
गुरु पितु मातु बन्धु पति देवा। सब मोहिं कहं जानै दृढ़ सेवा॥
मम गुण गावत पुलक शरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा॥
काम आदि मद दंभ न जाके। तात निरन्तर वश मैं ताके॥

दो०—वचन कर्म मन मोरि गति, भजन करैं निष्काम।
तिनके हृदय कमल महँ, करौं सदा विश्राम॥

❀ सबरी की भक्ति ❀

सबरी देखि राम गृह आये। मुनि के वचन समुझि जिय भाये॥
सरसिज लोचन बाहु विशाला। जटा मुकुट सिर उर बनमाला॥
श्याम गौर सुन्दर दोउ भाई। सबरी परी चरण लपटाई॥

प्रेम मगन मुख वचन न आवा। पुनि पुनि पद सरोज शिर नावा ॥
सादर जल लै चरण पखारे। पुनि सुंदर आसन बैठारे ॥
दो०—कंद मूल फल सरस अति, दिये राम कहं आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए, बारंबार बखानि ॥
पाणि जोरि आगे भइ ठाढी। प्रभुहिं बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी॥
केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति मैं जड़ मति भारी॥
अधम ते अधम अधम अति नारी। तिन महं मैं मतिमंद अघारी ॥
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानौं एक भक्ति कर नाता॥
जाति पांति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुण चतुराई ॥
भक्ति हीन नर सोहै कैसे। बिनु जल वारिद देखिय जैसे ॥
नवधा भक्ति कहौं तोहि पाहीं। सावधान सुनु धरु मन माहीं ॥
प्रथम भक्ति संतन कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ॥
दो०—गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भक्ति अमान।
चौथि भक्ति मम गुण गण, करइ कपट तजि गान ॥
मंत्र जाप मम दृढ विश्वासा। पंचम भजन सो वेद प्रकाशा ॥
षट दम शील विरति बहु कर्मा। निरत निरंतर सज्जन धर्मा ॥
सातवं सब मोहिं मय जग देखा। मोते संत अधिक कर लेखा ॥
आठवँ यथा लाभ संतोषा। सपनेहुं नहिं देखै परदोषा ॥
नवम सरल सब सन छल हीना। मम भरोस हियँ हर्ष न दीना ॥
नव महं एकहु जिन के होई। नारि पुरुष सचराचर कोई ॥
सो अतिशय प्रिय भामिनि मोरे। सकल प्रकार भक्ति दृढ़ तोरे ॥
योगि वृंद दुर्लभ गति जोई। तोकहुं आजु सुलभ भइ सोई ॥
मम दर्शन फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज स्वरूपा ॥
दो०—सब प्रकार तव भाग बड़, मम चरणन अनुराग।
तव महिमा जेहि उर बसहि, तासु परम बड़ भाग ॥

❀ श्रीराम गीता ❀

दो०—जीवन मुक्त ब्रह्म पर, चरित सुनहिं तजि ध्यान ।
जे हरि कथा न करहिं रति, तिनके हृदय पषान ॥

एक बार रघुनाथ बुलाये । गुरु द्विज पुरवासी सब आये ॥
बैठे गुरु मुनि अरु द्विज सज्जन । बोले बचन भक्त भय भञ्जन ॥
सुनहु सकल पुरजन मम बानी । कहौं न कछु ममता उर आनी ॥
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई । सुनहु करहु जो तुमहिं सोहाई ॥
सोइ सेवक प्रियतम मम सोई । मम अनुशासन मानै जोई ॥
जो अनीति कछु भाषौं भाई । तौ मोहिं वर्जेहु भय बिसराई ॥
बड़े भाग्य मानुष तनु पावा । सुर दुर्लभ सद ग्रन्थन गावा ॥
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा । पाइ न जेहि परलोक संभारा ॥

दो०—सो परत्र दुख पावई, सिर धुनि धुनि पछिताय ।
कालहिं कर्महि ईश्वरहिं, मिथ्या दोष लगाय ॥

यहि तनु कर फल विषय न भाई । स्वर्गहु स्वल्प अन्त दुखदाई ॥
नर तनु पाय विषय मन देहीं । पलटि सुधा ते शठ बिष लेहीं ॥
ताहि कबहुँ भल कहै न कोई । गुञ्जा गहै परस मणि खोई ॥
आकर चारि लक्ष चौरासी । योनि भ्रमत यह जिव अविनाशी ॥
फिरत सदा माया कर प्रेरा । काल कर्म स्वभाव गुण घेरा ॥
कबहुंक करि करुणा नर देही । देत ईश बिनु हेतु सनेही ॥
नर तनु भव बारिध कहं बेरो । सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो ॥
कर्णधार सद् गुरु दृढ़ नावा । दुर्लभ साज सुलभ करि पावा ॥

दो०—जो न तरै भव सागर, नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निन्दक मंद मति, आतमहन गति जाइ ॥

❁ ज्ञान दीपक ❁

दो० – औरहु ज्ञान भक्ति कर भेद सो सुनहु प्रवीन।
जो सुनि होय राम पद, प्रीति सदा अवछीन ॥

सुनहु तात यह अकथ कहानी। समुझत बनै न जाय बखानी ॥
ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखराशी ॥
सो माया वश भयो गुसाईं। वंध्यो कीर मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहिं ग्रन्थि परि गई। यदपि मृषा छूटत कठिनाई ॥
जब ते जीव भयो संसारी। छूटि न ग्रन्थि न होय सुखारी ॥
श्रुति पुराण बहु कह्यो उपाई। छुटै न अधिक अधिक अरुझाई ॥
जीव हृदय तम मोह विशेषी। ग्रन्थि छुटै किमि परै न देखी ॥
अस संयोग ईश जब करई। तबहुं कदाचित सो निरुअरई ॥
सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई। जो हरि कृपा हृदय वश आई ॥
जप तप व्रत यम नियम अपारा। जो श्रुति कह शुभ धर्म अचारा ॥
सोइ तृण हरित चरै जब गाई। भाव वत्स शिशु पाय पेन्हाई ॥
नोइ निवृत्ति पात्र विश्वासा। निर्मल मन अहीर निज दासा ॥
परम धर्म मय पय दुहि भाई। अवटै अनल अकाम बनाई ॥
तोष मरुत तब छमा जुड़ावै। धृति सम जावन देइ जमावै ॥
मुदिता मथै विचार मथानी। दम अधार रजु सत्य सुबानी ॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता। विमल विराग सुभग सुपुनीता ॥

दो०—योग अग्नि करि प्रगट तब, कर्म शुभाशुभ लाय।
बुद्धि सिरावै ज्ञान घृत, ममता मल जरि जाय ॥
तब विज्ञान निरूपिणी, बुद्धि विशद घृत पाय।
चित्त दिया भरि धरै दृढ़, समता दिअटि बनाय ॥

दो०—तीनि अवस्था तीनि गुण, तेहि कपास ते काढ़ि।
तूल तुरीय सम्हारि पुनि, वाती करै सुगाढ़ि॥

सो०—यहि विधि लेसैं दीप, तेज रासि विज्ञानमय।
जातहिं जासु समीप, जरहिं मदादिक सलभ सब॥

सोहमस्मि इति वृत्ति अखण्डा। दीप शिखा सोइ परम प्रचण्डा॥
आतम अनुभव सुख सुप्रकाशा। तव भव मूल भेद भ्रम नाशा॥
प्रवल अविद्या कर परिवारा। मोह आदि तम मिटै अपारा॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उजियारा। उर गृह वैठि ग्रन्थि निरुवारा॥
छोरन ग्रन्थि पाव जौं सोई। तब यह जीव कृतारथ होई॥
छोरत ग्रन्थि जानि खगराया। विघ्न अनेक करै तब माया॥
ऋद्धि सिद्ध प्रेरै वहु भाई। बुद्धिहिं लोभ दिखावै आई॥
कल बल छल करि जाय समीपा। अंचल वात बुझावै दीपा॥
होय बुद्धि जो परम सयानी। तिन तन चितव न अनहित जानी॥
जौं तेहिं विघ्न बुद्धि नहिं बाधी। तो बहोरि सुर करहिं उपाधी॥
इन्द्री द्वार झरोखा नाना। तहं तहं सुर वैठे करि थाना॥
आवत देखहिं विषय वयारी। ते हठि देहिं कपाट उघारी॥
जब सो प्रभञ्जन उर ग्रह जाई। तबहिं दीप विज्ञान बुझाई॥
ग्रन्थि न छूटि मिटा सो प्रकाशा। बुद्धि विकल भइ विषय बताशा॥
इन्द्री सुरन न ज्ञान सुहाई। विषय भोग पर प्रीति सदाई॥
विषय समीर बुद्धि कृत भोरी। तेहि विधि दीप को बार वहोरी॥

दो०—तब फिर जीव विविध विधि पावै संसृति क्लेश।
हरि माया अति दुस्तर तरि न जाय विहंगेश॥
कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन विवेक।
होइ घुणाक्षर न्याय जौ पुनि प्रत्यूह अनेक॥

ज्ञान पन्थ कृपाण कै धारा। परत खगेश होय नहिं बारा॥
जो निर्विघ्न पन्थ निर्वहई। सो कैवल्य परम पद लहई॥
अति दुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुराण निगम आगम वद॥
राम भजति सोइ मुक्ति गोसाईं। अन इच्छित आवै बरिआईं॥
जिमि थल विनु जल रहि न सकाई। कोटि भांति कोउ करै उपाई॥
तथा मोक्ष सुख सुनु खगराई। रहि न सकै हरि भक्ति विहाई॥
अस विचारि हरिभक्त सयाने। मुक्ति निरादर भक्ति लुभाने॥

❀ सप्त प्रश्न ❀

पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ। जो कृपालु मोहिं ऊपर भाऊ॥
नाथ मोहिं निज सेवक जानी। सप्त प्रश्न मम कहहु बखानी॥
प्रथमहिं कहहु नाथ मति धीरा। सबते दुर्लभ कवन शरीरा॥
बड़दुख कवन कवन सुख भारी। सो सँक्षेपहि कहहु विचारी॥
संत असंत मरम तुम जानहु। तिन्हकर सहज स्वभाव बखानहु॥
कवन पुण्य श्रुति विदित विशाला। कहहु कवन अघ परम कराला॥
मानस रोग कहहु समुझाई। तुम सर्वज्ञ कृपा अधिकाई॥
तात सुनहु सादर अति प्रीती। मैं सँक्षेप कहहुँ यह नीती॥
नर तनु सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर याचत जेही॥
नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी। ज्ञान विराग भक्ति सुभ देनी॥
सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं विषय रत मन्द मन्द तर॥
कांच किरिच बदले ते लेहीं। करते डारि परस मणि देहीं॥
नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख कछु नाहीं॥
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज स्वभाव खगराया॥
संत सहहिं दुख परहित लागी। पर दुख हेतु असंत अभागी॥
भूर्ज तरू सम संत कृपाला। परहित नित सह विपति विशाला॥

सन इव खल पर बंधन करई। खाल कढ़ाय विपति सहि मरई॥
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी॥
पर सम्पदा विनाशि नशाहीं। जिमि ससि हति हिम उपलबिलाहीं॥
दुष्ट उदय जग अनरथ हेतु। यथा प्रसिद्ध अधम गृह केतू॥
सन्त उदय सन्तत सुखकारी। विश्व सुखद जिमि इन्दु तमारी॥
परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा। परनिंदा सम अघ न गरीसा॥
हरि गुर निन्दक दादुर होई। जन्म सहस्र पाव तनु सोई॥
द्विज निन्दक बहु नर्क भोग करि। जग जन्मै बायस शरीर धरि॥
सुर श्रुति निन्दक जे अभिमानी। रौरव नर्क परहिं ते प्रानी॥
होहिं उलूक सन्त निन्दा रत। मोह निशा प्रिय ज्ञान भानु गत॥
सब की निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर हुइ अवतरहीं॥
सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्हते दुख पावहिं सब लोगा॥
मोह सकल व्याधिन कर मूला। तिन्हते पुनि उपजहिं बहु शूला॥
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा॥
प्रीति करहिं जो तीनिउ भाई। उपजै सन्निपात दुखदाई॥
विषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब शूल नाम को जाना॥
ममता दादु कण्डु इरषाई। हर्ष विषाद गरह बहुताई॥
पर सुख देखि जरनि सोइ छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई।
अहङ्कार अति दुखद डमरुआ। दम्भ कपट मद मान नहरुआ॥
तृष्णा उदर वृद्धि अति भारी। त्रिविधि ईषणा तरुण तिजारी॥
युग विधि ज्वर मत्सर अविवेका। कहंलगि कहौं कुरोग अनेका॥

दो०—एक व्याधि वस नर मरहिं, ये असाधि बहु व्याधि।
पीड़हिं सन्तत जीव कहं, सो किमि लहै समाधि॥
नेम धर्म आचार तप, ज्ञान यज्ञ जप दान।
भेषज पुनि कोटिन्ह नहि, रोग जाहिं हरियान॥

यहि विधि सकल जीव जग रोगी। शोक हर्ष भय प्रीति वियोगी ॥
मानस रोग कछुक मैं गाये। हैं सब के लखि विरलन्ह पाये ॥
जाने ते छीजहिं कछु पापी। नाश न पावहिं जन परितापी ॥
विषय कुपथ्य पाइ अंकुरे। मुनिहुं हृदय का नर बापुरे ॥

राम कृपा नाशहिं सब रोगा। जो यहि भांति बनै संयोगा ॥
सद्गुर वैद्य बचन विश्वासा। संयम यह न विषय की आशा ॥
रघुपति भक्ति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा अति रूरी ॥
यहि विधि भलेहिं कुरोग नशाहीं। नाहि तो कोटि यतन नहिं जाहीं ॥

जानिय तव मन विरुज गोसाँई। जब उर बल विराग अधिकाई ॥
सुमति क्षुधा बाढ़इ नित नई। विषय आस दुर्बलता गई ॥
विमल ज्ञान जल जब सो नहाई। तब रह राम भक्ति उर छाई ॥
शिव अज शुक सनकादिक नारद। जे मुनि ब्रह्म विचार विशारद ॥

सब कर मत खग नायक येहा। करिय राम पद पंकज नेहा ॥
श्रुति पुराण सद्ग्रन्थ कहाहीं। रघुपति भक्ति विना सुख नाहीं ॥
कमठ पीठ जामहिं बरु बारा। वन्ध्या सुत बरु काहुहिं मारा ॥
फूलहिं नभ बरु बहु विधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला ॥

तृपा जाय बरु मृग जल पाना। बरु जामहि शश शीश त्रिषाना ॥
अन्धकारु बरु रविहिं नशावै। राम विमुख सुख जीव न पावै ॥
हिम ते अनल प्रगट बरु होई। राम विमुख सुख पाव न कोई ॥

दो०—बारि मथे घृत होय बरु, सिकताते बरु तेल।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ, यह सिद्धांत अपेल ॥
मशकहिं करइ विरंचि प्रभु, अजहिं मशक ते हीन।
अस विचारि तजि संशय, रामहिं भजहिं प्रवीन ॥

❀ बचनामृतों का सार ❀

१—संसार को स्वप्नवत् जानो :—

उमा कहौं मैं अनुभव अपना । सत हरि भजन जगत सब सपना॥

२—अति हिम्मत रक्खो :—

धीरज धर्म मित्र अरु नारी । आपति काल परखिये चारी ॥

३—अखण्ड प्रफुल्लित रहो दुःख में भी :—

फिरत सनेह मगन सुख अपने । हर्ष विषाद शोक नहिं सपने ॥

४—परमात्मा का स्मरण करो जितना बन सके :—

देह धरे का यह फल भाई । भजिय राम सब काम विहाई ॥

५—किसी को दुख मत दो बने तो सुख दो :—

परहित सरिस धर्म नहिं भाई । पर पीड़ा सम नहिं अघमाई ॥

६—सभी पर अति प्रेम रक्खो :—

सरल स्वभाव सबहिं सन प्रीती । सम शीतल नहिं त्यागहिं नीती ॥

७—नूतन बालवत् स्वभाव रक्खो :—

सेवक सुत पितु मातु भरोसे । रहै असोच बने प्रभु पोसे ॥

८—मर्य्यादानुसार चलो :—

नीति निपुण सोइ परम सयाना । श्रुति सिद्धांत नीक तेहि जाना ॥

९—अखण्ड पुरुषार्थ करो गंगा प्रवाहवत् आलसी मत बनो:—

करो अखण्ड परम पुरुषारथ । स्वारथ सुयश धर्म परमारथ ॥

१०—जिसमें तुमको नीचा देखना पड़े ऐसा काम मत करो :—

गुरु पितु मातु स्वामि सिखपाले । चलत कुमग पग परत न खाले ॥

दो०—यह रहस्य रघुनाथ कर, वेगि न जानै कोय ।
जाने ते रघुपति कृपा, सपनेहुँ मोह न होय ॥

मति अनुरूप कथा मैं भाषी। यद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी ॥
यह नहिं कहिय शठहिं हठशीलहिं। जो मन लाय न सुन हरिलीलहिं॥
कहिय न लोभिहिक्रोधिहि कामिहि। जोन भजहिं सचराचरस्वामिहि
द्विज द्रोहिहि न सुनाइय कवहूं। सुरपति सरिस होय नृप जबहूं ॥
मन क्रम बचन जनित अघजाई। सुनहिं जो कथा श्रवण मनलाई ॥
प्रणत कल्प तरु करुणा पुञ्जा। उपजै प्रीति राम पद कञ्जा ॥
मन कामना सिद्धि नर पावा। जो यह कथा कपट तजि गावा ॥
जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख सम्पति नाना विधिपावहिं॥
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं। अन्तकाल रघुपति पुर जाहीं ॥
सुनहिं विमुक्त विरति अरु विषई। लहहिं भगति गतिसंपति नितई॥
राम उपासक जे जग माहीं। यहि सम प्रिय तिनके कछु नाहीं॥

दो०—मुनि दुर्लभ हरि भक्ति नर, पावहि विनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरन्तर, सुनहिं मानि विश्वास ॥

हरिहर पद रति मति न कुतरकी। तिनकहँ मधुर कथा रघुबर की ॥
राम भगति भूषित जिय जानी। सुनिहहिं सुजन सराहि सुवानी॥
गुरु पद प्रीति नीति रत जेई। द्विज सेवक अधिकारी तेई ॥
ताकहं यह विशेष सुखदाई। जाहि प्राण प्रिय श्री रघुराई ॥
जे यह कथा सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता॥
होइहैं राम चरण अनुरागी। कलिमल रहित सुमंगल भागी ॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं। ते गोपद इव भव निधि तरहीं ॥

दो०—राम चरण रति जो चहैं, अथवा पद निर्वान।
भाव सहित सो यह कथा, करैं श्रवण पुट-पान ॥
कामिहिनारि पियारि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर, प्रिय लागहु मोहिं राम ॥

❋ इति श्री राम ❋

❁ अजय रथ ❁

रावण रथी विरथ रघुबीरा। देखि विभीषण भयउ अधीरा ॥
अधिक प्रीति मन भा सन्देहा। वन्दि चरण कह सहित सनेहा ॥
नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना। केहि विधि जितब वीर बलवाना॥
सुनहु सखा कह कृपा निधाना। जेहि जय होय सो स्यन्दन आना।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका ॥
बल विवेक दम परहित घोरे। क्षमा कृपा समता रजु जोरे ॥
ईश भजनु सारथी सुजाना। विरति चर्म सन्तोष कृपाना ॥
दान परसु बुधि शक्ति प्रचण्डा। वर विज्ञान कठिन को दण्डा ॥
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम यम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद विप्र गुरु पूजा। यहि सम विजय उपाय न दूजा ॥
सखा धर्ममय अस रथ जाके। जीतन कहं न कतहुँ रिपु ताके ॥
दो०—महा अजय संसार रिपु, जीत सकइ सो वीर।
जाके अस रथ होय दृढ़, सुनहु सखा मति धीर ॥

॥ इति शुभम् ॥

विश्वम्भर प्रेस, २ शाहगंज (तेलटंकी) इलाहाबाद।